प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण

❑ डा. एल. एन. मित्तल

प्राथमिक स्तर पर भाषा-शिक्षण गंभीर और संवेदनशील प्रक्रिया है । यह प्रक्रिया बाल-विकास के विशिष्ट चरणों में उनकी भाषा-विकास क्षमता को समझने की मांग करती है । दूसरी ओर भाषा के व्याकरणिक नियमों और संरचना को समझने की आवश्यकता है। लेकिन इतने भर से भी काम नहीं चलने वाला क्योंकि भाषा एक सामाजिक और गत्यात्मक सांस्कृतिक घटक है । इसलिए भाषा-शिक्षण में जीवंत व्यावहारिक गतिविधियां और महत्वपूर्ण हो जाती हैं ।

भाषा हमारे दैनन्दिन व्यवहार के केन्द्र में हैं । यद्यपि चिमपैन्जी या डोल्फिन कुछ संकेतों को ग्रहण कर सकती हैं, परन्तु जिस प्रकार के जटिल भाषा संकेतों का प्रयोग मानव करता है, वह उसकी अपनी विशिष्टता है । संस्कृति और मानव व्यवहार की तमाम गतिविधियां बिना भाषा के संभव नहीं हैं । यह कहना कठिन है कि पहले चिन्तन प्रक्रिया शुरू हुई और फिर भाषा का व्यवहार शुरू हुआ या भाषा व्यवहार ने ही हमारी चिन्तन प्रक्रिया को प्रखरता दी । आज के सन्दर्भ में यह बात तय है कि भाषा के बिना मानव व्यवहार और चिन्तन संभव नहीं है।

भाषा की कोई परिभाषा लिखने से पहले यह जानना जरूरी है कि भाषा संकेतात्मक है, अर्थात जिन ध्वनियों का हम उच्चारण करते हैं वे प्रतीक मात्र हैं । दूसरी बात यह है कि ये प्रतीक उच्चरित होते हैं । भाषा का लिखित रूप गौण होता है और संसार की अनेक भाषाएं ऐसी हैं जो आज तक लिपिबद्ध नहीं हुई है। वाचिक भाषा के अलावा आंगिक संकेतों से भी भाव प्रगट किये जा सकते हैं । परन्तु वे बहुत सीमित भावों को प्रगट करने की क्षमता रखते हैं । भाषा के संबंध में तीसरी बात यह है कि भाषा का अपना एक विशिष्ट सामाजिक परिवेश होता है । उस परिवेश के समाज और उसकी संस्कृति को अभिव्यक्त करने के लिए वह भाषा पूर्णत: समर्थ होती है ।

इन तीनों उपरोक्त वर्णित आधारों पर हम भाषा को एक सामाजिक व्यवस्था मान सकते हैं जो उच्चारण और श्रवण के ध्वन्यात्मक प्रतीकों का समूह हैं । यह तो भाषा की एक बहुत स्थूल परिभाषा हुई और जैसे जैसे हम आगे बढ़ते जायेंगे, भाषा के अन्य तत्त्वों की समीक्षा करते जायेंगे । कुछ मौटे तौर पर भाषा बॉक्स में दर्शायी प्रक्रिया की तरह काम करती है ।

जब बच्चा अपने भाषिक समुदाय में रहकर मातृभाषा का अधिगम करता है तो यह प्रक्रिया स्वत: ही चलती रहती है । 'मातृभाषा' किसे कहते हैं, इस संबंध में किसी शास्त्रीय बहस की आवश्यकता नहीं है । मातृभाषा वह है जो बच्चा पैदा होते ही अपने पारिवारिक परिवेश में बोलते हुए सुनता है। टिहरीगढ़वाल के जौनपुर क्षेत्र में यह जौनपुरी होगी । कहीं-कहीं यह प्रश्न उठता है कि पारिवारिक परिवेश की भाषा में अन्तर होता है । जौनपुर क्षेत्र में ऐसी ही स्थिति है जहां पारिवारिक परिवेश की भाषा तो जौनपुरी है, परन्तु तत्काल निकटतम सामाजिक परिवेश की भाषा मानक हिन्दी (कौरवी या खड़ी बोली का परिष्कृत रूप) है । अन्य बोली क्षेत्रों विशेषकर राजस्थान या बिहार या पहाड़ी क्षेत्रों में ऐसी स्थिति सर्वत्र है । इस प्रकार की स्थिति को द्विभाषिकता की स्थिति कह सकते हैं । जहां बालक दो भाषाओं की ध्वन्यात्मक संरचना और उसके व्याकरणिक रूप पर एक साथ अधिकार करता जाता है । जहां ऐसी दो भाषाओं (हम भाषा और बोली के विवाद में नही पड़ रहे हैं) की व्याकरणिक संरचना और शब्दकोष लगभग समान होता है, केवल धातु और प्रातिपदिकों में लगने वाले प्रत्ययों को छोड़कर, वहां इस द्विभाषिकता की स्थिति सरल होती है । इन्हें हम समवर्गी द्विभाषिक कहते हैं, प्राय: हिन्दी के बोली क्षेत्रों के

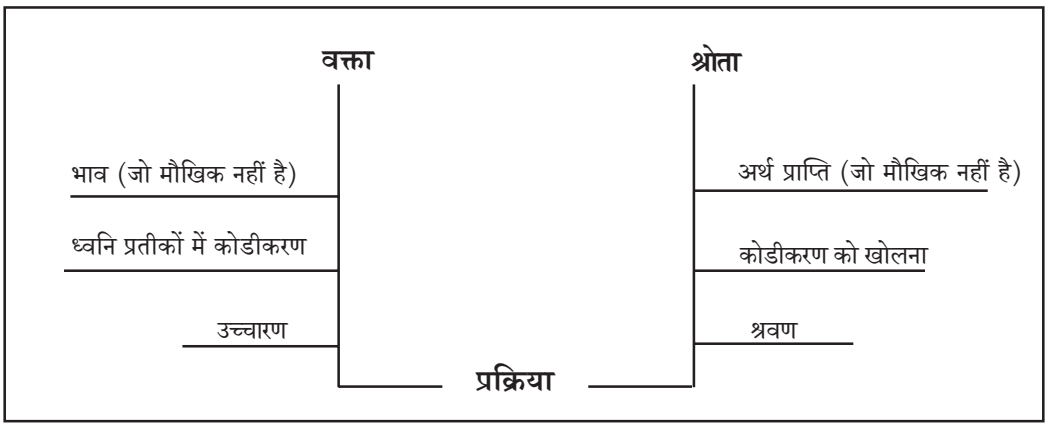

वक्ताओं के साथ यही स्थिति है ।

यहां इस प्रश्न पर बहस की गुंजाइश नहीं है कि भाषा और बोली में क्या अन्तर है ? भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से भाषा और बोली में केवल यही अन्तर है कि बोली में भावगम्यता परस्पर अधिक होती है और भाषा के बोलने वालों का क्षेत्र विस्तार अधिक होता है और प्राय: उसका प्रयोग नितान्त घरेलू बातचीत के अलावा व्यापार, अर्थ, शिक्षा और अन्य औपचारिक सन्दर्भों में अधिक होता है । गैर भाषा वैज्ञानिक कारणों में भाषा और बोली में यह अन्तर माना जाता है कि बोली में लिखित साहित्य का अभाव होता है व भाषा के बोलने वाले सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक या धार्मिक कारणों से अधिक सम्भ्रान्त हो सकते हैं । (यहां 'विकास' शब्द की बहस में नहीं पड़ रहे हैं क्योंकि भाषा के बोलने वाले ज्यादा विकसित व बोली के बोलने वाले कम विकसित होते हैं, एक खतरनाक निष्कर्ष है) । वास्तव में भाषागत विशिष्टता की दृष्टि से बोली अधिक सुगठित और लालित्यपूर्ण तथा लोक-साहित्य से भरपूर रहती है । बोली या भाषा के सन्दर्भ में निम्न बातें जानना भी जरूरी है :

1. प्रत्येक भाषा कुछ ध्वन्यात्मक नियमों से बंधी है ।
2. प्रत्येक ध्वन्यात्मक प्रतीकों का एक ही अर्थ है ।
3. पद और पदार्थ का संबंध स्वैच्छिक रूप से निर्धारित है। परन्तु इसको सामाजिक मान्यता है और प्रत्येक व्यक्ति को किसी पदार्थ के लिए स्वयं पद निर्मित करने की मनमानी छूट नहीं है।
4. भाषा मूलत: मौखिक है (उसका लिखित रूप गौण होता है)।
5. प्रत्येक भाषा का एक अपना सामाजिक संसार होता है ।
6. प्रत्येक भाषा जीवन्त होती है ।
7. प्रत्येक भाषा का व्याकरणिक विवरण प्रस्तुत किया जा सकता है ।
8. प्रत्येक भाषा अपने में विलक्षण होती है ।
9. प्रत्येक भाषा श्रेष्ठ होती है । (किसी अन्य भाषा की तुलना में उस भाषा को निम्न/निकृष्ट/अविकसित/पिछड़ी हुई नहीं कहा जा सकता ।)
10. व्याकरण मात्र उस भाषा के मानक रूप को बनाये रखने के लिए नियमों का वर्णन करता है ।
11. भाषा वर्णनात्मक होती है, न कि आदेशात्मक । (प्रिस्क्रिपटिव)
12. बच्चा किसी भाषिक समुदाय का सदस्य होने के नाते उस भाषा के नियमों को स्वयंमेव आत्मसात (इंटरनलाइज) करता रहता है। (परन्तु वह भाषा के जीवन्त रूप से सरोकार रखता है ।)

प्राथमिक स्तर पर ध्वनि, पद और वाक्य की दृष्टि से भाषा का समग्र रूप से शिक्षण और अधिगम लक्ष्य होना चाहिये । इसमें भाषा की अपनी क्षमता और बच्चे की निर्वहन क्षमता की प्रक्रिया महत्वपूर्ण है । अवधारणाएं अशरीरी होती हैं, अत: उन्हें आकार देने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है । शब्द, पदांश, वाक्यांश या पूर्ण वाक्यों के बिना किसी अवधारणा को शक्ल देना संभव नहीं है । बच्चा पहचान, तुलना और व्यतिरेक द्वारा किसी शब्द के सामान्य अर्थ को ग्रहण करते हुए उसके अन्तर्निहित अर्थ तक पहुंचने का प्रयास करता है ।

भाषा का अधिगम

बच्चा जब किसी भाषा का अधिगम करता है तो वह दो स्थितियों का सामना करता है । एक, भाषा के नियम उसे उस भाषा की समर्थता/क्षमता/सामर्थ्य (काम्पटेन्सी) का भान करवाते हैं परन्तु हर बच्चे का इस भाषा के निष्पादन/निर्वहन (परफॉर्मेंस)स्तर अलग अलग होता है । भाषा अधिगम के जटिल और गहरे नियमों के अन्तर्गत बालक सहजता से उन नियमों के आधार पर विचारों को, वाक्यों के माध्यम से अभिव्यक्त कर सकता है क्योंकि उसने उन नियमों को परिवेश में रहते हुए सीखा है । जिन्हें वह एक भाषिक समुदाय के सदस्य के रूप में निरन्तर आत्मसात करता रहता है। इन नियमों को बच्चे ने तर्क से नहीं सीखा है अपितु ये नियम उसे अन्त: प्रेरणा से मालूम हैं । व्यवहारवादी मानते हैं कि बच्चा भाषा को दोहराकर या वयस्क से सुनकर उसे दोहराते हुए सीखता है । इसी को वातावरणवादी (एनवायरोमेन्टलिस्टस) इस तरह कहते हैं कि बच्चा अपने भाषिक समुदाय के वातावरण से भाषा सीखता है ।

परन्तु यदि हम भाषा अधिगम के सिद्धांतों के जाल में न फंसें, तो कह सकते हैं कि :-

1. भाषा अधिगम इसलिए संभव है कि प्रत्येक बच्चे में अदम्य क्षमता होती है ।

2. सभी प्रकार का भाषा अधिगम परिवेश में होता है ।

3. प्रत्येक भाषा का अपना विलक्षण और विशिष्ट विचारों का संसार होता है । बच्चा उस समुदाय का सदस्य होने के नाते अपनी आयु और क्षमता के अनुसार उन विचारों के संसार को भी पकड़ता है और उनकी अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त भाषा-व्यवहार करता है ।

4. भाषा नैसर्गिक (इनफॉरमल) वातावरण में अधिगमित होती है ।

5. प्रत्येक दिन और धीरे धीरे बच्चे का शब्द भण्डार विस्तृत होता जाता है ।

(एडगर डेल के अनुसर कक्षा-एक के विद्यार्थी का शब्द-भण्डार 3000 शब्दों का होता है । और प्रत्येक वर्ष यह शब्द भण्डार 1000 शब्दों की गति से बढ़ना चाहिये ।)

6. स्कूल में बच्चे का भाषा-अधिगम अधिक तीक्ष्ण होता जाता है क्योंकि शिक्षक भी इसमें परिष्कार करते जाते हैं।

शिशु का भाषा-व्यवहार

मनौवैज्ञानिक मानते हैं कि जन्म के शुरू के दस या ग्यारह महीने शिशु केवल इशारों से अपने भावों को व्यक्त करता है । शिशु शुरू के छः महीनों में अपने वाक्-यन्त्र का प्रयोग करना सीख जाता है, वह रोता है, कभी कभी हंसता है । अगले छः महीनों में वह कुछ ध्वनियों का उच्चारण करने लगता है । इस समय बच्चा एकाक्षरी (मोनो सिलेविक) शब्दों का उच्चारण करता है और शायद 'मां' शब्द सबसे पहले बोलता है ।

शिशु का संचारात्मक व्यवहार उसके परिवेश के वयस्कों के भाषिक व्यवहार पर निर्भर करता है क्योंकि वहीं से नकल करके शिशु भाषिक व्यवहार को प्रगाढ़ करता है । मां-बाप शिशु के एकाक्षरी शब्दों के वाक्यों को इसलिए समझ लेते हैं क्योंकि वे शिशु से परिचित होते हैं । ढाई से तीन साल के बच्चे जिस भाषा का व्यवहार करते हैं उसे स्व-केन्द्रित (इगो-सेंटरिक) उच्चार कहते हैं । इस उम्र के बच्चे के उच्चार को आन्तरिक वाणी कह सकते हैं यानि वह अपने मन में भाषा के माध्यम से विचार करता रहता है । इसमें निम्न तीन प्रक्रियाएं चलती रहती हैं :

I नकल और संरचना-संकोच

II नकल और संरचना - विस्तार और

III प्रच्छन्न संरचना का आगम ।

प्राथमिक स्तर पर भाषा व्यवहार

प्राथमिक स्तर पर भाषा व्यवहार की अग्रलिखित दशाएं हो सकती हैं :

ध्वनियां

- ध्वनियों को सुनना
- विभिन्न ध्वनियों को अलग अलग पहचानना ।
- विभिन्न ध्वनियों के उच्चारण-भेद को पहचानना ।
- उम्र के अनुसार गलत उच्चारण में सुधार
- त्रुटि-विश्लेषण

पद

- पदों की पहचान अर्थों सहित
- शब्द संरचना और अर्थ
- विभिन्न प्रसंगों में शब्दों की पहचान और उनका वर्गीकरण

वाक्य

- वाक्य संरचना
- वाक्य अधिगम
- सारांश वाक्यों का व्यवहार

एवं आयु और भाषा जटिलता के आधार पर वाक्य संरचनाओं की पकड़ ।

अवधारणा-निर्धारण

प्राथमिक स्तर पर ध्वनि, पद और वाक्य की दृष्टि से भाषा का समग्र रूप से शिक्षण और अधिगम लक्ष्य होना चाहिये । इसमें भाषा की अपनी क्षमता और बच्चे की निर्वहन क्षमता की प्रक्रिया महत्वपूर्ण है । अवधारणाएं अशरीरी होती हैं, अतः उन्हें आकार देने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है । शब्द, पदांश, वाक्यांश या पूर्ण वाक्यों के बिना किसी अवधारणा को शक्ल देना संभव नहीं है । बच्चा पहचान, तुलना और व्यतिरेक द्वारा किसी शब्द के सामान्य अर्थ को ग्रहण करते हुए उसके अन्तर्निहित अर्थ तक पहुंचने का प्रयास करता है । बच्चे की भाषा का संबंध उन अनुभवों से है जो वह शारीरिक कार्य करते हुए प्राप्त करता है अथवा उन अनुभवों से भी है जिन्हें वह महसूस करता है अथवा अपने परिवेश में देखता है । अतः इस स्थिति में शिक्षक बच्चे के अनुभव के संसार को विस्तार दे सकता है। अतः जितनी ज्यादा गतिविधियां कक्षा और कक्षा इतर होंगी, बच्चे की भाषा क्षमता में उतना ही विस्तार होगा क्योंकि भाषा क्षमता के साथ साथ मूल्य बोध भी जुड़ा है । अतः शिक्षक को पाश्चात्य मान्यताएं और अपने पूर्वाग्रह से हटकर निजी परिवेश के समाज की सांस्कृतिक विरासत को दर्शाना चाहिये और बच्चे की सहजता पर अंकुश नहीं लगाना चाहिये ।◆